इनकम टैक्स का मामला

न्यायमूर्ति आर. एस. नरूला और एस. एस. संधावलिया के समक्ष

एस. पी. जायसवाल, - ***याचिकाकर्ता***

बनाम

आयकर आयुक्त, पंजाब - ***प्रतिवादी***

1964 का इनकम टैक्स केस नंबर 4

10 जुलाई, 1968

आयकर अधिनियम (1922 का XI) - धारा 66 - समय से परे फाइल के तहत आवेदन *- आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण - क्या परिसीमा की अवधि बढ़ाने का अधिकार है - आयकर* अधिनियम (1961 *का XLIII) - धारा* **256 (1***) -* **अपीलीय न्यायाधिकरण की देरी की क्षतिपूर्ति की शक्ति -** धारा *297 ((2) की सीमा"किसी व्यक्ति के मूल्यांकन के लिए कार्यवाही" - आयकर का अर्थ (कठिनाइयों का निवारण)* **आदेश** *(1962)* - 1 अप्रैल, 1962 **से पहले दायर आयकर रिटर्न** - जिसके तहत अधिनियम से निपटा जाना *है - आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण ने समयबद्ध आवेदन पर विचार करने से इनकार कर दिया - उच्च न्यायालय के संदर्भ के लिए आवेदन - क्या 'झूठ-* **उच्च न्यायालय- परमादेश जारी कर सकता** *है। भारत का संविधान* (1950)- *अनुच्छेद* 227 *- के तहत शक्ति - ऐसे संदर्भ देने के लिए आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण के आदेश को रद्द करने के लिए कब लागू किया जा सकता है।*

यह माना गया **कि आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण के पास आयकर अधिनियम, 1922 की धारा 66 (1) के तहत आवेदन करने के लिए निर्धारित सीमा की अवधि को बढ़ाने के लिए कानून के किसी भी प्रावधान के तहत कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। यदि आवेदन निर्धारित समय से अधिक किया**

जाता है, तो ट्रिब्यूनल के पास इसे खारिज करने के अलावा कोई विवेकाधिकार नहीं है जब तक कि इसके विपरीत एक वैधानिक प्रावधान नहीं किया जाता है या परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के प्रावधान उन कार्यवाहियों पर लागू नहीं किए जाते हैं। तथापि, अधिकरण के पास आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 256 की उप-धारा (1) के अंतर्गत आवेदन करने में अधिकतम तीस दिनों तक के विलंब को माफ करने का क्षेत्राधिकार है, यदि अधिकरण इस बात से संतुष्ट है कि आवेदन समय के भीतर दायर नहीं किए जाने का पर्याप्त कारण है।

[पैरा 21 (iv) और (v)]

यह माना **गया कि 1961 के अधिनियम की धारा 297 (2) (ए) में प्रयुक्त "किसी व्यक्ति के मूल्यांकन के लिए कार्यवाही" शब्द व्यापक संभव आयाम का है और उक्त वाक्यांश में "मूल्यांकन" शब्द का उपयोग इसके व्यापक अर्थ में और बहुत व्यापक अर्थों में किया गया है ताकि इसमें आयकर अधिनियम या वित्त अधिनियम के तहत उस स्तर तक मूल्यांकन से संबंधित सभी संभावित कार्यवाही को शामिल किया जा सके जिसके बाद कुछ भी नहीं बचता है। विचाराधीन वर्ष के संबंध में कर के आकलन और गणना के संबंध में किया जाना।**

[पैरा 21 (vi)]

यह माना गया **कि 1961 अधिनियम की धारा 297 की उप-धारा (2) के खंड (ए) और उक्त अधिनियम की धारा 298 के तहत जारी आयकर (कठिनाइयों का निवारण) आदेश, 1962 के संचालन का संयुक्त प्रभाव यह है कि उच्च न्यायालय के संदर्भ के लिए आवेदन सहित सभी कार्यवाही मूल्यांकन के संबंध में है। जिस वर्ष के संबंध में आय का रिटर्न 1 अप्रैल, 1962 से पहले दाखिल किया गया था, उसे 1922 अधिनियम के तहत**

निपटाया जाना चाहिए जैसे कि 1961 का अधिनियम पारित नहीं किया गया था।

यह माना गया कि आयकर अधिनियम, 1922 की धारा 66 (3) के तहत एक आवेदन आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण के एक आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय में नहीं आता है, जिसमें उक्त अधिनियम की धारा 66 (1) के तहत एक निश्चित रूप से समयबद्ध आवेदन पर विचार करने से इनकार कर दिया गया था, भले ही यह दिखाया जा सके कि ट्रिब्यूनल द्वारा समय बढ़ाने से इनकार करना कानून द्वारा आवश्यक नहीं था। इसके अलावा, न तो 1922 अधिनियम की धारा 66 (2) के तहत एक आवेदन और न ही 1961 अधिनियम की धारा 256 की उप-धारा (2) के तहत एक आवेदन एक ऐसे मामले में संदर्भ देने के लिए *परमादेश* जारी करने के लिए उच्च न्यायालय में आता है जहां आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण ने इस आधार पर संदर्भ के लिए आवेदन के गुण-दोष पर विचार करने से इनकार कर दिया है कि यह समय से प्रतिबंधित है। इस तरह का आवेदन केवल एक ऐसे मामले में निहित है जहां ट्रिब्यूनल ने इस आधार पर संदर्भ देने से इनकार कर दिया है कि उसके अपीलीय आदेश से कानून का कोई सवाल नहीं उठता है।

| पैरा 21 (i) और (ii)]

यह माना गया कि संविधान के अनुच्छेद 227 द्वारा उच्च न्यायालय को प्रदत्त न्यायिक अधीक्षण की शक्ति का उपयोग ट्रिब्यूनल के एक आदेश को रद्द करने के लिए किया जा सकता है, जिसमें कहा गया है कि उसके पास उसके समक्ष रखे गए किसी विशेष मामले पर निर्णय लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, यदि यह पाया जाता है कि वास्तव में ट्रिब्यूनल के पास मामले पर निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र था और उसने गलती से कानून द्वारा निहित वैधानिक अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने से इनकार कर दिया। [पैरा 21 (iii)]

आयकर अधिनियम, 1922 की धारा *66 (3) के तहत आवेदन आयकर अधिनियम,* 1961 की धारा *256 और भारत के संविधान के* अनुच्छेद *227 के* साथ पढ़ा *जाता है, जिसमें प्रार्थना की जाती है कि यह माननीय न्यायालय आयकर*

अपीलीय न्यायाधिकरण, नई दिल्ली को निर्देश दे कि वह याचिकाकर्ताओं के आवेदन को संदर्भ के लिए माने (आर.ए. **(क) 479/63-61** *मूल्यांकन वर्ष* 1946-47) *समय पर और उसमें किए गए अनुरोध के अनुसार संदर्भ देना।*

एच . एल. याचिकाकर्ता की ओर से उनके साथ वरिष्ठ अधिवक्ता सिब्बल, अधिवक्ता एससी सिब्बल।

प्रतिवादी की ओर से डी. एन. अवस्थी और बाई वंत सिंह गुप्ता, वकील।

निर्णय

निर्णय दिया गया था:-

न्यायमूर्ति नरूला- यह आवेदन श्री एस. पी. जायसवाल (इसके बाद करदाता के रूप में संदर्भित) द्वारा आयकर अधिनियम, 1922 की धारा 66 (3) (इसके बाद 1922 अधिनियम कहा जाता है) के साथ आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 256 (इसके बाद 1961 अधिनियम के रूप में संदर्भित) और संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर किया गया है। केवल इस आवेदन पर निर्णय लेने के लिए जिन तथ्यों पर ध्यान देने की आवश्यकता है, वे यह हैं कि आकलन वर्ष 1946-47 के लिए आयकर की गणना के लिए आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण में करदाता की अपील का न्यायाधिकरण के 15 फरवरी, 1963 के आदेश द्वारा निपटारा किए जाने के बाद, 1922 अधिनियम की धारा 66 (1) (इस आवेदन के अनुलग्नक 'ए' की प्रति) के तहत करदाता द्वारा कानून के दो प्रश्नों को संदर्भित करने के लिए एक आवेदन दायर किया गया था। न्यायालय। यह विवादित नहीं है कि उक्त आवेदन इस तरह के संदर्भ के लिए ट्रिब्यूनल में जाने के लिए निर्धारित समय से 21 दिन बाद दायर किया गया था। आवेदन की सुनवाई में करदाता की ओर से यह स्वीकार किया गया था, और वास्तव में अब भी इससे इनकार नहीं किया गया है, कि आवेदन को समय पर रोक दिया गया था। करदाता ने हालांकि भारतीय परिसीमा कानून, 1908 की धारा पांच का इस्तेमाल कुछ खास आधारों पर देरी के लिए माफी देने के लिए किया जिसके गुण-दोष से हमारा इन कार्यवाहियों से कोई लेना-देना नहीं है। ट्रिब्यूनल ने 16 सितंबर, 1963 (अनुबंध 'बी') के अपने आदेश में कहा कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 1922 अधिनियम की धारा 66 (1) के तहत आवेदन पर लागू नहीं होती है और 1922 अधिनियम की धारा 66 (1) के तहत आवेदन के लिए परिसीमा अधिनियम की धारा 5 का लाभ नहीं दिया गया था। उस प्रावधान का

लाभ करदाता द्वारा लागू नहीं किया जा सकता था। इन परिस्थितियों में, ट्रिब्यूनल ने कहा कि संदर्भ के लिए आवेदन को सीमा द्वारा रोक दिया गया था और ट्रिब्यूनल ने "गुण-दोष पर विचार किए बिना" उस छोटे से आधार पर इसे खारिज कर दिया।"

(2) वर्तमान आवेदन में आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण, नई दिल्ली को यह निर्देश देने का अनुरोध किया गया है कि वह करदाता के संदर्भ के लिए आवेदन को समय के भीतर दायर किए गए के रूप में माने और ट्रिब्यूनल को संदर्भ देने का निर्देश दे। आयकर आयुक्त की ओर से आवेदन का विरोध किया गया है।

(3) पहला प्रश्न जो निर्णय की मांग करता है वह कानून के उस प्रावधान के बारे में है जिसके तहत वर्तमान आवेदन पर इस न्यायालय द्वारा विचार किया जा सकता है। निर्धारिती के वकील श्री हीरा लाई सिब्बल ने निष्पक्ष और स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि 1922 अधिनियम की धारा 66 की उप-धारा (3) को उनके मुवक्किल द्वारा लागू नहीं किया जा सकता है क्योंकि ट्रिब्यूनल का निर्णय कि संदर्भ के लिए आवेदन को समय द्वारा रोक दिया गया था, वास्तव में अकाट्य है और यह एक स्वीकार्य तथ्य है कि आवेदन वास्तव में समय द्वारा रोक दिया गया था। धारा 66 की उपधारा (3) करदाता या आयकर आयुक्त को उस प्रावधान में उल्लिखित आधार के अलावा किसी अन्य आधार पर इस न्यायालय में जाने के लिए अधिकृत नहीं करती है, अर्थात, इस आधार पर कि याचिका को समय द्वारा प्रतिबंधित करने के बारे में आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण का निर्णय गुण-दोष के आधार पर सही नहीं है। उस प्रावधान के तहत यह न्यायालय केवल एक ही राहत दे सकता है कि वह अधिकरण को धारा 66 की उपधारा (1) के तहत आवेदन को समय के भीतर किए गए आवेदन के रूप में मानने का निर्देश दे। यह राहत दी गई है, जिसे इस मामले में संभवतः दावा या दिया नहीं जा सकता है।

(4) वकील ने तब प्रस्तुत किया कि यह आवेदन उप के अंतर्गत आता है। 1961 अधिनियम की धारा 256 (2) के अनुरूप 1922 अधिनियम की धारा 66 की धारा (2)। हम इस निवेदन से सहमत नहीं हैं। उपर्युक्त दोनों उपबंधों में, इस न्यायालय को केवल तभी स्थानांतरित किया जा सकता है जब:-

(a) ट्रिब्यूनल को आवेदक द्वारा 1922 अधिनियम की धारा 66 की उपधारा (1) या 1961 अधिनियम की धारा 256 की उप-धारा (1) के तहत दायर किया गया था, जैसा भी मामला हो; और
(b) यदि उक्त आवेदन पर, ट्रिब्यूनल इस आधार पर मामले को बताने से इनकार करता है कि इसमें कानून का कोई सवाल नहीं उठता है।

(5) इसमें कोई संदेह नहीं है कि करदाता ने न्यायाधिकरण का रुख किया

था। धारा 66 की धारा (1), लेकिन ट्रिब्यूनल ने संदर्भ के लिए दावे के गुण-दोष पर कोई आदेश पारित करने से स्पष्ट रूप से परहेज किया है। ट्रिब्यूनल ने इस सवाल पर भी गौर नहीं किया है कि क्या उसे मामले को टाल देना चाहिए या क्या उसे मामले को बताने से इनकार कर देना चाहिए। किसी भी स्थिति में, ट्रिब्यूनल ने कहीं भी यह सुझाव नहीं दिया है कि जिन प्रश्नों को उसके द्वारा इस न्यायालय को संदर्भित करने की मांग की गई थी, वे कानून के प्रश्न नहीं थे या यह ट्रिब्यूनल के अपीलीय आदेश से उत्पन्न नहीं हुआ था। ट्रिब्यूनल के आदेश से असंतुष्ट पक्ष के लिए जो भी अन्य उपाय उपलब्ध हो सकते हैं, वे ईएफएफफेक्ट को दिए गए आधार के अलावा किसी अन्य आधार पर संदर्भ देने से इनकार करते हैं कि मामले में कानून का कोई सवाल नहीं उठता है, उन्हें निश्चित रूप से 1922 अधिनियम की धारा 66 की उप-धारा (2) या 1961 अधिनियम की धारा 256 (2) को लागू करने का कोई अधिकार नहीं है।

(6) श्री सिब्बल ने अंत में कहा कि इस आवेदन को संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत खारिज कर दिया जाना चाहिए क्योंकि ट्रिब्यूनल ने कानून द्वारा निहित अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने से इनकार कर दिया है। यहां तक कि श्री अवस्थी भी इस विवाद के खिलाफ कुछ नहीं कह सके। संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को निश्चित रूप से लागू किया जा सकता है यदि इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के भीतर कोई ट्रिब्यूनल एक आदेश पारित करता है जो पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर है या इस आधार पर इसमें निहित अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने से इनकार करता है कि उसके पास ऐसा कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत इस न्यायालय का अधिकार क्षेत्र इस उद्देश्य के लिए नागरिक प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्तियों के समान है।

(7) दो न्यायालयों के बीच मुख्य अंतर यह है कि जबकि यह केवल उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालय का आदेश है जिसे संहिता की धारा 115 के तहत हस्तक्षेप किया जा सकता है, संविधान के अनुच्छेद 227 को किसी भी ट्रिब्यूनल के आदेश में हस्तक्षेप के लिए भी लागू किया जा सकता है जो उच्च न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के भीतर बैठता है। जिन परिस्थितियों में उच्च न्यायालय दोनों मामलों में से किसी एक में हस्तक्षेप करता है, वे व्यावहारिक रूप से समान हैं। इसलिए, हम 1923 अधिनियम की धारा 66 (3) या 1961 अधिनियम की धारा 256 (2) के तहत इस आवेदन पर विचार करने से इनकार करते हैं, लेकिन संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत इसे सुनने और निपटाने के लिए आगे बढ़ते हैं।

(8) यद्यपि श्री सिब्बल द्वारा कुछ समय के लिए यह दिखाने का प्रयास किया गया था कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 1922 अधिनियम की धारा 66 (1) के तहत एक आवेदन पर लागू होती है, अंततः उनके द्वारा यह स्वीकार किया गया था कि भारतीय परिसीमा अधिनियम के समय न्यायाधिकरण के समक्ष निर्धारिती का आवेदन दायर किया गया था। 1908 लागू था, और परिसीमा अधिनियम, 1963 के लागू होने से पहले, परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के प्रावधानों को निर्धारिती द्वारा लागू नहीं किया जा सकता था क्योंकि इस प्रावधान को धारा 66 (1) के तहत कार्यवाही के लिए विस्तारित या लागू नहीं किया गया था। इसका कारण यह है कि धारा 5 को 1908 अधिनियम की धारा 29 (2) (ए) में शामिल नहीं किया गया है, हालांकि अब इसे परिसीमा अधिनियम, 1963 के संबंधित प्रावधान में शामिल किया गया है।

(9) श्री सिब्बल ने अंत में प्रस्तुत किया कि इस तथ्य के बावजूद कि न्यायाधिकरण में निर्धारिती के आवेदन को 1922 अधिनियम की धारा 66 (1) के तहत एक के रूप में वर्णित किया गया था, और इस तथ्य के बावजूद कि उस प्रावधान के तहत संदर्भ देने के लिए उस आवेदन के पैराग्राफ 5 में एक विशिष्ट अनुरोध किया गया था, वह प्रावधान जिसके तहत आवेदन वास्तव में दायर किया जाना चाहिए था और एकमात्र प्रावधान जिसके तहत ट्रिब्यूनल द्वारा वास्तव में संदर्भ दिया जा सकता था, 1961 अधिनियम की धारा 256 की उप-धारा (1) थी। जबकि आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण के पास 1922 अधिनियम की धारा 66 (1) के तहत आवेदन दाखिल करने के लिए निर्धारित सीमा की अवधि को बढ़ाने या इसे दाखिल करने में देरी को माफ करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। यह संदेह से परे है कि 1961 अधिनियम की धारा 256 की उपधारा (1) में निम्नलिखित परंतुक जोड़ना, जो उप-धारा 1922 अधिनियम की धारा 66 (1) से मेल खाती है, अब ट्रिब्यूनल को परंतुक में उल्लिखित परिस्थितियों में सीमा की निर्धारित अवधि का विस्तार करने के लिए अधिकृत करती है: -

> "बशर्ते कि अपीलीय न्यायाधिकरण, यदि वह संतुष्ट है कि आवेदक को निर्दिष्ट अवधि के भीतर आवेदन प्रस्तुत करने से पर्याप्त कारण से रोका गया था, तो इसे तीस दिनों से अधिक की अवधि के भीतर प्रस्तुत करने की अनुमति दे सकता है।"

(10) इसलिए, यह स्पष्ट है कि यदि एकमात्र उचित कानून जिसके तहत करदाता द्वारा प्रासंगिक समय पर ट्रिब्यूनल को संदर्भ के लिए आवेदन किया जा सकता है, वह 1961 अधिनियम था, तो ट्रिब्यूनल के पास वास्तव में देरी को माफ करने का अधिकार क्षेत्र था यदि वह संतुष्ट हो सकता है कि करदाता को धारा 256

की उप-धारा (1) में निर्दिष्ट अवधि के भीतर आवेदन प्रस्तुत करने से पर्याप्त कारण से रोका गया था। जहां तक आवेदन किया गया था, वह सीमा की निर्धारित अवधि की समाप्ति के तीस दिनों से अधिक की अवधि के भीतर दायर नहीं किया गया था। दूसरी ओर, यह भी उतना ही स्पष्ट है कि यदि 1961 का अधिनियम संदर्भ कार्यवाही पर लागू नहीं होता है और विचाराधीन आवेदन 1922 अधिनियम के तहत निर्धारिती द्वारा सही तरीके से दायर किया गया था, तो ट्रिब्यूनल द्वारा पारित आदेश में कोई अपवाद नहीं लिया जा सकता है।

(11) इस मामले में इन परिस्थितियों में निर्णय के लिए जो मुख्य मुद्दा उभरता है वह यह है कि क्या संदर्भ के लिए आवेदन 1922 अधिनियम या 1961 अधिनियम के तहत है। इस प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए कुछ और प्रासंगिक तथ्यों को ध्यान में रखना होगा। ये हैं कि 1931 का अधिनियम 1 अप्रैल, 1962 से लागू हुआ था, कि उस समय, अपीलीय सहायक आयुक्त के आदेश के खिलाफ निर्धारिती की अपील ट्रिब्यूनल के समक्ष लंबित थी, जिसे अंततः 15 फरवरी, 1963 के आदेश द्वारा निपटाया गया था, कि संदर्भ के लिए आवेदन उस तारीख के बहुत बाद दायर किया गया था। और यह कि आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा जिस आय की वापसी के संबंध में दूसरी अपील का निपटान किया गया था और जिसके संबंध में इस न्यायालय को संदर्भ मांगा गया था (आकलन वर्ष 1946-47 के लिए) करदाता द्वारा 1961 के अधिनियम के लागू होने की तारीख से बहुत पहले दायर किया गया था। इस परिपे्रक्ष्य में हमें यह निर्णय लेने के लिए बुलाया गया है कि क्या श्री सिब्बल का यह निवेदन कि 1 अपै्रल, 1962 से 1922 के अधिनियम के निरसन को ध्यान में रखते हुए संदर्भ के लिए आवेदन केवल 1961 अधिनियम की धारा 256 की उपधारा (1) के अधीन अधिकरण में किए जाने की आवश्यकता थी। और इसलिए, ट्रिब्यूनल ने उस उप-धारा के परंतुक की अनदेखी की है, जबकि यह मानते हुए कि समय बढ़ाने का उसका कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, सही है या नहीं।

(12) 1922 के अधिनियम को 1961 अधिनियम की धारा 297 की उप-धारा (1) द्वारा निरस्त कर दिया गया है, यदि चीजें वहीं होती, तो श्री सिब्बल वास्तव में अपने निवेदन में सही होते। तथापि, धारा 297 की उपधारा (2) के खंड (क) और (ग) पर इस मामले के बारे में निर्णय लेने से पहले विचार किया जाना है। राजस्व का मामला यह है कि धारा 297 की उप-धारा (2) के खंड (ए) में निहित प्रावधान के कारण संदर्भ के लिए आवेदन 1922 अधिनियम के तहत किया जाना था। उस खंड से प्रासंगिक उद्धरण नीचे उद्धृत किया गया है: –

"(1) भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 को निरस्त किया जाता है।

(2) भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 (इसके बाद निरस्त अधिनियम के रूप में संदर्भित) के निरसन के बावजूद, -

(a) यदि किसी व्यक्ति द्वारा किसी मूल्यांकन वर्ष के लिए इस अधिनियम के लागू होने से पहले आय विवरणी दाखिल की गई है, तो उस वर्ष के लिए उस व्यक्ति के मूल्यांकन के लिए कार्यवाही की जा सकती है और जारी रखी जा सकती है जैसे कि यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था;

(b) * * * • »
* * • # *

(c) इस अधिनियम के लागू होने पर किसी आयकर प्राधिकरण, अपीलीय अधिकरण या किसी न्यायालय के समक्ष अपील, संदर्भ या संशोधन के माध्यम से लंबित किसी भी कार्यवाही को जारी रखा जाएगा और उसका निपटान इस तरह किया जाएगा जैसे कि यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था।;

(d) * * * * •
*

(e) * * * *
* * * * *

(f) * * * * *
* * * * *

(g) 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले वर्ष या उससे पहले के किसी भी वर्ष के लिए, जो 1 अप्रैल, 1962 को या उसके बाद पूरा हो गया है, किसी भी मूल्यांकन के संबंध में दंड लगाने की कोई भी कार्यवाही शुरू की जा सकती है और इस अधिनियम के तहत ऐसा कोई भी जुर्माना लगाया जा सकता है;

(h) * * ♦
* * ♦ *

)

(i) * * * * *

* * * *

(j) * * * • *

* * • * *

(k) * ♦ * • *

♦ • * *

(1) * * * • *

* .

(m) यदि निरसित अधिनियम के अधीन किसी आवेदन, अपील, संदर्भ या संशोधन के लिए निर्धारित अवधि इस अधिनियम के प्रारंभ में या उससे पहले समाप्त हो गई थी, तो इस अधिनियम की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि इस अधिनियम के अधीन ऐसे किसी आवेदन, अपील, संदर्भ या संशोधन को केवल इस तथ्य के कारण सक्षम किया जाए कि इसलिए एक लंबी अवधि निर्धारित की गई है या उपयुक्त **प्राधिकारी द्वारा उपयुक्त मामलों में समय विस्तार के लिए प्रावधान किया** गया है।"

(13) धारा 297 (2) का खंड (सी) केवल उन विशेष और विशिष्ट कार्यवाहियों पर लागू होता है जो 1961 के अधिनियम के प्रारंभ में लंबित थे, यानी 1 अप्रैल, 1962 को। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि यह न्यायाधिकरण में करदाता की अपील थी जो उस दिन लंबित थी और इसलिए, इसे पुराने अधिनियम के तहत आवश्यक रूप से निपटाया जाना था जैसे कि नया अधिनियम पारित नहीं किया गया था। संदर्भ के लिए आवेदन 1961 के अधिनियम के लागू होने की तारीख पर लंबित नहीं था। धारा 297 की उप-धारा (2) के खंड (सी) का इसलिए, विवाद में कार्यवाही पर कोई लागू नहीं हो सकता है। इससे यह सवाल उठता है कि क्या खंड (ए) करदाता द्वारा किए गए संदर्भ के लिए आवेदन पर लागू होता है। इस प्रश्न का उत्तर बदले में खंड (ए) में निहित "मूल्यांकन के लिए कार्यवाही" अभिव्यक्ति के सही दायरे और सही निर्माण पर निर्भर करेगा। राजस्व का मामला यह है कि इस अभिव्यक्ति में 1961 अधिनियम की धारा 256 (1) के तहत कार्यवाही शामिल है। दूसरी ओर श्री सिब्बल ने तर्क दिया है कि उनके मुवक्किल के "मूल्यांकन के लिए कार्यवाही" अंततः ट्रिब्यूनल के अपीलीय आदेश में समाप्त हुई और हालांकि संदर्भ के लिए आवेदन कानून के कुछ सवालों पर उच्च न्यायालय की राय प्राप्त करने के लिए किया गया था और हालांकि यह काफी संभव है कि संदर्भ के निर्णय के

परिणामस्वरूप मूल्यांकन कार्यवाही को फिर से खोलना और फिर से शुरू करना आवश्यक हो गया हो। हस्तक्षेप लिंक में संदर्भ के लिए आवेदन शामिल था और परिणामस्वरूप संदर्भ को "मूल्यांकन कार्यवाही" नहीं कहा जा सकता था। श्री सिब्बल ने इस संबंध में आयकर आयुक्त की प्रिवी काउंसिल की टिप्पणियों ("मूल्यांकन" शब्द का उपयोग कभी-कभी आय की गणना, कभी-कभी देय कर की राशि का निर्धारण और कभी-कभी करदाता पर देयता लगाने के लिए अधिनियम में निर्धारित पूरी प्रक्रिया के रूप में किया जाता है) पर भरोसा किया है / *बॉम्बे प्रेसीडेंसी और एडेन* वी। *खेमचंद रामदास* [1], जिनके बारे में कहा जाता है कि उन्हें सी.ए. अब्राहम बनाम सुप्रीम कोर्ट के लॉर्डशिप द्वारा अनुमोदित किया गया *था। आयकर अधिकारी, कोट्टायम, और एक अन्य* [2]। उस मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह निम्नानुसार माना गया था :-

> "अधिनियम के अध्याय IV के प्रावधानों की समीक्षा से पर्याप्त रूप से पता चलता है कि उस अध्याय में "मूल्यांकन" शब्द का उपयोग इसके व्यापक अर्थ में किया गया है। अध्याय का शीर्षक "कटौती और मूल्यांकन" है। वह धारा जो केवल आय **की** गणना के रूप में मूल्यांकन से संबंधित है, धारा 23 है; लेकिन कई धाराएं आय की गणना से संबंधित नहीं हैं, बल्कि देयता के निर्धारण, देयता लगाने के लिए मशीनरी और इस संबंध में प्रक्रिया से संबंधित हैं। धारा 18ए कर के अग्रिम भुगतान और प्रावधानों को पूरा करने में विफल रहने पर जुर्माना लगाने से संबंधित है। धारा 23ए कुछ कंपनियों के व्यक्तिगत सदस्यों को लाभांश के रूप में वितरित की गई आय पर आकलन करने की शक्ति से संबंधित है, धारा 23 बी कर योग्य क्षेत्रों से प्रस्थान के मामले में मूल्यांकन से संबंधित है, धारा 24 बी मृत व्यक्तियों की संपत्ति से कर संग्रह से संबंधित है, धारा 25 बंद किए गए व्यवसाय के मामले में मूल्यांकन से संबंधित है। धारा 25ए हिंदू अविभाजित परिवारों के विभाजन के बाद आकलन के साथ और धारा 29, 31, 33 और 35 मांग नोटिस जारी करने और अपील दायर करने और मूल्यांकन की समीक्षा करने से संबंधित है और धारा 34 उन आय के आकलन से संबंधित है जो मूल्यांकन से बच गई हैं। इन धाराओं में प्रयुक्त शब्द "मूल्यांकन" का उपयोग केवल आय की गणना के अर्थ में नहीं किया जाता है और हमारे निर्णय में यह मानने का कोई आधार नहीं है कि जब धारा 44 द्वारा, यह घोषित किया जाता है कि एसोसिएशन के भागीदार या सदस्य संयुक्त रूप से और अलग-अलग

[1] (1938)6 I.L.R. 414 at P.416
[2] (1961)4 I.T.R. 425 at 429

मूल्यांकन के लिए उत्तरदायी होंगे, तो इसका उद्देश्य केवल धारा 23 के तहत आय की गणना के लिए दायित्व की घोषणा करना है ।और कर देयता की घोषणा और अधिरोपण की प्रक्रिया और उसे लागू करने के लिए मशीनरी के आवेदन के लिए नहीं।

(14) दूसरी ओर अवस्थी ने कलावती देवी हरलालका *बनाम आयकर* आयुक्त, पश्चिम बंगाल और अन्य[3] में कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंडपीठ के फैसले में निम्नलिखित अंश का उल्लेख किया है:—

> जेटली ने कहा, 'आयकर कानून में आकलन शब्द का व्यापक रूप से इस्तेमाल किया गया है। धारा 297 (2) (ए) में 'मूल्यांकन के लिए कार्यवाही' का व्यापक अर्थ है और इसके दायरे में 1922 के अधिनियम के अध्याय IV में परिकल्पित मूल्यांकन से संबंधित विभिन्न कार्यवाहियों को शामिल किया गया है, जिसमें 1961 के अधिनियम के प्रारंभ से पहले आय की रिटर्न दाखिल करने वाले मामले में अपील, संदर्भ और संशोधन के माध्यम से कार्यवाही शामिल है। धारा 297 (2) का खंड (सी) खंड (ए) के दायरे को मूल मूल्यांकन के लिए कार्यवाही तक सीमित नहीं करता है।

(15) श्री अवस्थी ने अंत में इस संबंध में *कलावती देवी हरलालका* बनाम *सुप्रीम कोर्ट के आधिकारिक फैसले का उल्लेख किया।आयकर आयुक्त, पश्चिम बंगाल और अन्य* (4) इस आशय के हैं कि "हमें ऐसा लगता है कि धारा 297 1922 के अधिनियम के निरसन से उत्पन्न होने वाली सभी आकस्मिकताओं के लिए यथासंभव प्रदान करने के लिए है। यह लंबित अपील, संशोधन आदि से संबंधित है। यह 1961 के अधिनियम के प्रारंभ में लंबित गैर-पूर्ण आकलन, और 1961 अधिनियम के लागू होने के बाद किए जाने वाले आकलन, 1961 के अधिनियम के लागू होने के बाद दायर आय के रिटर्न के परिणामस्वरूप किए जाने वाले आकलन से संबंधित है। इस स्तर पर केन्द्र सरकार द्वारा प्रख्यापित और 8 अगस्त, 1963 के भारत के राजपत्र में प्रकाशित 1961 अधिनियम की धारा 298 और आयकर (कठिनाइयों का निवारण) आदेश, 1962 के खंड 4 में निहित उपबंधों पर ध्यान दिया जाना चाहिए:-

[3] (1966) 62 i.l.t. 544

"298(1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी बनाने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, सामान्य या विशेष आदेश द्वारा, ऐसा कुछ भी कर सकती है जो ऐसे उपबंधों से असंगत न हो जो कठिनाई को दूर करने के प्रयोजन रा्थ आवश्यक या समीचीन प्रतीत होता हो।

(2) विशेष रूप से, और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता के पूर्वाग्रह के बिना, ऐसा कोई भी आदेश उन अनुमोदनों या संशोधनों का प्रावधान कर सकता है जिनके अधीन निरस्त अधिनियम 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले मूल्यांकन वर्ष या किसी भी पूर्व वर्ष के लिए मूल्यांकन के संबंध में लागू होगा।

(16) 1962 के आदेश का खंड 4 निम्नलिखित शर्तों में है; —

"4. (1) भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 (1922 का 11) (इसके बाद निरस्त अधिनियम के रूप में संदर्भित) के तहत किए गए किसी आदेश के संबंध में पहली या बाद की अपील, संदर्भ या संशोधन के माध्यम से कार्यवाही शुरू की जाएगी और निपटाई जाएगी जैसे कि निरसन अधिनियम पारित नहीं किया गया था।

(2) निरसन अधिनियम के तहत 31 मार्च, 1962 के बाद और इस आदेश की तारीख से पहले शुरू की गई ऐसी कोई भी कार्यवाही निरस्त अधिनियम के तहत स्थापित मानी जाएगी और उसका निपटान इस तरह किया जाएगा जैसे कि निरसन अधिनियम पारित नहीं किया गया था:

परन्तु यदि निरसन अधिनियम के किसी प्रावधान के अधीन इस आदेश की तारीख से पहले ऐसी किसी कार्यवाही का निपटान किया गया है, तो उसे निरसित अधिनियम के तदनुरूपी उपबंध के अधीन निपटाया गया माना जाएगा और इस प्रकार निपटाई गई कार्यवाही के संबंध में कोई अपील, संदर्भ या संशोधन इस प्रकार स्थापित और निपटाया जाएगा जैसे निरसन अधिनियम पारित नहीं किया गया हो।"

(17) धारा 298 और उसके तहत जारी किए गए केंद्र सरकार के आदेश के खंड 4 के आयात, दायरे और प्रभाव पर कलकत्ता उच्च न्यायालय के साथ-

)

साथ *कलावती देवी हरलालका के* मामले (सुप्रा) में सुप्रीम कोर्ट के उनके लॉर्डशिप के समक्ष विचार किया गया। बोस, सीजे, जिन्होंने कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंडपीठ का निर्णय लिखा था, ने इस संबंध में निम्नानुसार निर्णय दिया -

पीठ ने कहा, 'लेकिन यह बताया जाना चाहिए कि आयकर (कठिनाइयों को दूर करना) आदेश, 1962 के खंड (4) के प्रावधानों को इस आधार पर हमारे समक्ष चुनौती दी गई है कि ऐसा प्रावधान स्पष्ट रूप से केंद्र सरकार की शक्ति से परे है जैसा कि आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 298 द्वारा प्रदान किया गया है. अपीलकर्ता के वकील की दलील है कि खंड (4) अधिनियम की धारा 297 के साथ असंगत है और इसमें उस धारा में मौजूद एक कमी को भरने की मांग की गई है। लेकिन यदि धारा 297 (2) (ए) की मेरी व्याख्या सही है और "मूल्यांकन के लिए कार्यवाही" अपील, संदर्भ और संशोधन के माध्यम से कार्यवाही को शामिल करने के लिए पर्याप्त व्यापक है, जो मूल्यांकन की मशीनरी में अलग-अलग कदम हैं, तो खंड (4) ने जो किया है वह केवल यह स्पष्ट करने के लिए है कि खंड (ए) में क्या निहित था और यह संदेह या कठिनाई को दूर करने के उद्देश्य से है, धारा 297(2) के खंड (क) के निर्माण के संबंध में यदि कोई विद्यमान है कि कठिनाई निवारण आदेश, 1962 में खंड (4) जैसा विशिष्ट उपबंध पुरस्थापित किया गया था। मामले के इस दृष्टिकोण में, यह माना जाना चाहिए कि अपीलकर्ता के विद्वान वकील की आलोचना या चुनौती में कोई बल नहीं है कि खंड (4) धारा 297 के प्रावधानों के साथ असंगत है या इस तरह के प्रावधान को लागू करके केंद्र सरकार अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी बनाने का इरादा नहीं कर रही थी या अधिनियम के प्रावधानों के साथ असंगत कुछ भी नहीं कर रही थी। धारा 298 द्वारा केंद्र सरकार को प्रदत्त शक्ति अपने आयाम में बहुत व्यापक है, यह राजा सम्राट बनाम राजा के मामले में न्यायिक समिति के निर्णय के संदर्भ से स्पष्ट होगा । *सिबनाथ बनर्जी*(तब सिबनाथ बनर्जी के मामले *में न्यायिक समिति के फैसले में कुछ टिप्पणियों का संदर्भ दिया गया था* ।

मेरे विचार से यही टिप्पणियां धारा 298 की उप-धाराओं (1) और (2) की व्याख्या करने में भी लागू होती हैं। इस धारा के तहत केंद्र सरकार 1961 के अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने में आने

वाली किसी भी कठिनाई को हल करने के लिए कोई भी आदेश पारित कर सकती है। धारा 298 की उप-धारा (1) से स्पष्ट है कि इस शक्ति पर रखी गई एकमात्र सीमा यह है कि केंद्र द्वारा पारित किया जाने वाला आदेश सरकार, चाहे वह सामान्य आदेश हो या विशेष आदेश, को उन उपबंधों के साथ असंगत नहीं होना चाहिए जिन्हें लागू करने के लिए इसे पारित किया गया है। धारा 298 की उपधारा (2) उदाहरणात्मक है और इसमें केंद्र सरकार को ऐसे सामान्य या विशेष आदेश में, जैसा कि उप-धारा (1) में विचार किया गया है, अनुकूलन और संशोधनों के लिए प्रावधान करने के लिए अधिकृत किया गया है, जिसके अधीन 31 मार्च को समाप्त होने वाले मूल्यांकन वर्ष के लिए मूल्यांकन के संबंध में 1922 का अधिनियम लागू होगा। 1962, या किसी भी पहले वर्ष। इसलिए आयकर (कठिनाइयों को दूर करना) आदेश, 1962 के खंड (4) की वैधता को चुनौती देने वाले अपीलकर्ता के विद्वान वकील की दलील को खारिज कर दिया जाना चाहिए।

एसीटी की धारा 297 की उप-धारा (2) के खंड (क) के निर्माण के प्रश्न पर और आयकर (कठिनाइयों का निवारण) आदेश, 1962 के खंड (4) की शर्तों के संबंध में इन निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, इस बिंदु पर कोई निश्चित राय व्यक्त करना आवश्यक नहीं है कि क्या सामान्य खंड अधिनियम की धारा 6, 1897, 1961 के अधिनियम के प्रावधानों की व्याख्या करने के उद्देश्य से उपलब्ध है।

(18) कलकत्ता उच्च न्यायालय के उपर्युक्त निर्णय के विरुद्ध कलवती देवी हरलालका द्वारा दायर अपील को खारिज करते हुए सीकरी ने कहा कि उच्चतम न्यायालय का निर्णय लिखने वाले जे. ने विभिन्न निर्णयों का उल्लेख करने के बाद, जिसमें व्यापक रूप से "मूल्यांकन" शब्द का उपयोग किया गया था, कहा:

"ऊपर उद्धृत अधिकारियों से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि "मूल्यांकन" शब्द का बहुत व्यापक अर्थ हो सकता है; यह करदाता पर दायित्व का पता लगाने और लागू करने की पूरी प्रक्रिया को समझ सकता है। क्या धारा 297 के संदर्भ में ऐसा कुछ है जो हमें "मूल्यांकन की प्रक्रिया" अभिव्यक्ति देने के लिए मजबूर करता है, जो अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा सुझाया गया संकीर्ण अर्थ है? हमारे विचार में, इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक होना चाहिए। हमें ऐसा लगता है कि धारा 297 1922 के अधिनियम की अपील से उत्पन्न होने वाली सभी आकस्मिकताओं के लिए यथासंभव प्रावधान करने के लिए है। यह लंबित अपील, संशोधन आदि से संबंधित है। यह 1961 के अधिनियम के प्रारंभ में लंबित गैर-पूर्ण आकलन, और 1961 अधिनियम के प्रारंभ के बाद किए जाने वाले मूल्यांकन से संबंधित है, जो 1961 अधिनियम के प्रारंभ के बाद दायर आय के रिटर्न के परिणामस्वरूप किया जाना है। फिर खंड (डी) में यह बच गई आय के संबंध में आकलन से संबंधित है; खंड (एफ) और (जी) में यह दंड लगाने से संबंधित है, खंड (एच) 1922 अधिनियम के तहत किए गए चुनावों या सजावट के प्रभाव को जारी रखता है; खंड (i) धनवापसी से संबंधित है; खंड (जे) वसूली से संबंधित है; खंड (के) आम तौर पर 1922 अधिनियम के तहत जारी सभी समझौतों, अधिसूचनाओं, आदेशों से संबंधित है, खंड (1) 1922 अधिनियम की धारा 60 (1) के तहत जारी अधिसूचनाओं को जारी रखता है, और खंड (एम) कुछ आवेदनों, अपीलों आदि के लिए 1961 अधिनियम के तहत निर्धारित सीमा की लंबी अवधि के आवेदन के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करता है। इस संदर्भ में यह शायद ही विश्वास योग्य है कि संसद ने पहले से किए गए मूल्यांकन आदेशों के संबंध में अपील और संशोधन के बारे में नहीं सोचा था या जिसे उसने धारा 297 (2) के खंड (ए) के तहत करने के लिए अधिकृत किया था।

(19) उन्होंने कहा, 'हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने एक बार फिर कहा है। *संकप्पा आदि।* आयकर *अधिकारी, सेंट्रल सर्कल II, बैंगलोर*[4] के अनुसार, "आकलन" शब्द का उपयोग 1961 अधिनियम की धारा 297 (2) (ए) में व्यापक अर्थों में किया गया है और इसमें रिटर्न दाखिल करने से शुरू होने वाली और करदाता द्वारा देय कर के निर्धारण के साथ समाप्त होने वाली सभी कार्यवाही शामिल हैं। धारा 66 (1) के तहत कार्यवाही मेरी राय में उसी श्रृंखला की एक कड़ी मात्र है।

(20) श्री सिब्बल ने यह भी कहा कि आयकर (कठिनाइयों का निवारण) आदेश, 1962 का खंड (4) अमान्य है क्योंकि यह धारा 298 के दायरे से बाहर है। विद्वान वकील का तर्क यह है कि धारा 298 "1961 के अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी बनाने में" उत्पन्न होने वाली किसी भी कठिनाई को दूर करने के लिए एक सामान्य या विशेष आदेश पारित करने की अनुमति देती है, न कि इसके किसी भी प्रावधान के दायरे को बढ़ाने के लिए। विद्वान वकील ो द्वारा धारा 298 के तहत केंद्र सरकार की शक्ति पर लगाए गए प्रतिबंध पर धारा में निहित प्रावधानों द्वारा इस आशय का बहुत जोर दिया गया है कि सरकार द्वारा पारित कोई भी सामान्य या विशेष आदेश अधिनियम के किसी भी प्रावधान के साथ असंगत नहीं होना चाहिए। श्री सिब्बल का कहना है कि कठिनाइयों को दूर करने के आदेश के खंड (4) में "संदर्भ" शब्द जोड़ना किसके द्वारा प्रभावित होता है? उपर्युक्त प्रतिबंध में "मूल्यांकन के लिए कार्यवाही" के रूप में संदर्भ के लिए आवेदन शामिल नहीं है और जहां तक 1962 के आदेश के खंड (4) में "संदर्भ" का उल्लेख किया गया है, यह धारा 297 की उप-धारा (2) के खंड (ए) के साथ असंगत है। तथापि, हमें श्री सिब्बल के इस निवेदन में कोई बल नहीं मिलता क्योंकि उच्चतम न्यायालय ने धारा 297 की उपधारा (2) के खंड (क) में होने वाली "मूल्यांकन के लिए कार्यवाही" शब्द को व्यापक रूप से उद्धृत किया है और *कलावती देवी हरलालका के मामले* में निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए कहा है। तब यह तर्क दिया गया था कि यदि खंड (ए) को उस तरीके से समझा जा सकता है जिस तरह से राजस्व ने हमारे सामने प्रचार किया है, तो धारा 297 की उप-धारा (2) का खंड (सी) पूरी तरह से निरर्थक और अर्थहीन हो जाएगा क्योंकि 19 जी 2 आदेश के साथ पढ़ा गया खंड (ए) अप्रैल से पहले दायर आयकर रिटर्न से उत्पन्न होने वाली सभी कार्यवाही

[4] AIR 1968 S.C. 816

का प्रावधान करेगा। 1962 को पुराने अधिनियम के तहत निपटाया जा रहा है, और तब खंड (सी) में इस आशय का एक विशिष्ट प्रावधान करने का कोई मतलब नहीं था कि 1 अप्रैल, 1962 को लंबित कार्यवाही को 1922 अधिनियम के तहत निपटाया जाना चाहिए। इस तर्क में एक स्पष्ट भ्रम है। खंड (ग) में उल्लिखित कार्यवाहियां। यानी, जो 1 अप्रैल, 1962 को लंबित थे, उन्हें पुराने अधिनियम के तहत निपटाया जाना चाहिए जैसे कि 1961 का अधिनियम पारित नहीं किया गया था। इस मामले में किसी भी प्राधिकारी को कोई विवेकाधिकार या विकल्प नहीं दिया गया है। ऐसा इस तथ्य के बावजूद है कि खंड (ग) में निर्दिष्ट सभी कार्यवाहियां निश्चित रूप से खंड (क) के अंतर्गत आएंगी, खंड (क) का कार्यक्षेत्र खंड (ग) की तुलना में व्यापक है। लेकिन अंतर इस तथ्य में निहित है कि जबकि खंड (सी) स्वचालित रूप से संचालित होता है और अनिवार्य शर्तों में निहित होता है, जहां तक खंड (ए) द्वारा कवर की गई कार्यवाही और खंड (सी) द्वारा कवर नहीं की गई कार्यवाही का संबंध है, राजस्व को विवेकाधिकार दिया गया है। यह 1961 के अधिनियम द्वारा लाए गए कानून की स्थिति थी। 1962 के आदेश के खंड (4) में निहित प्रावधान के अनुसार, राजस्व पर धारा 297 (2) (ए) द्वारा प्रदत्त विवेकाधिकार का उपयोग सरकार द्वारा उस खंड द्वारा कवर किए गए सभी मामलों के लिए एक बार किया गया है। उस आदेश के परिणामस्वरूप, खंड (ग) एक अर्थ में अस्थायी रूप से निरर्थक हो गया है। लेकिन इससे करदाता को कोई राहत नहीं मिल सकती।

(21) मामले में किसी अन्य बिंदु पर बहस नहीं की गई है। पूर्वगामी कारणों से, यह माना जाता है कि-

(i) आयकर अधिनियम, 1922 की धारा 66 (3) के तहत एक आवेदन आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण के उस आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय में नहीं आता है, जिसमें उक्त अधिनियम की धारा 66 (1) के तहत एक निश्चित रूप से समयबद्ध आवेदन पर विचार करने से इनकार कर दिया गया था, भले ही यह दिखाया जा सके कि ट्रिब्यूनल द्वारा समय बढ़ाने से इनकार करना कानून द्वारा आवश्यक नहीं था;

(ii) न तो 1922 अधिनियम की धारा 66 (2) के तहत एक आवेदन और न ही 1961 अधिनियम की धारा 256 की उप-धारा (2) के तहत एक आवेदन एक ऐसे मामले में संदर्भ देने के लिए *परमादेश* जारी करने

के लिए उच्च न्यायालय में आता है जहां आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण ने इस आधार पर संदर्भ के लिए आवेदन के गुण-दोष पर विचार करने से इनकार कर दिया है कि यह समय से प्रतिबंधित है। इस तरह का आवेदन केवल एक ऐसे मामले में निहित है जहां ट्रिब्यूनल ने इस आधार पर संदर्भ ^ देने से इनकार कर दिया है कि उसके अपीलीय आदेश से कानून का कोई सवाल नहीं उठता है;

(iii) संविधान के अनुच्छेद 227 द्वारा उच्च न्यायालय को प्रदत्त न्यायिक अधीक्षण की शक्ति का उपयोग किसी अधिकरण के उस आदेश को निरस्त करने के लिए किया जा सकता है जिसमें कहा गया है कि उसके समक्ष रखे गए किसी विशेष मामले पर निर्णय लेने का उसके पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है यदि यह पाया जाता है कि वास्तव में अधिकरण के पास इस मामले पर निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र था और उसने गलती से कानून द्वारा निहित वैधानिक अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने से इनकार कर दिया;

(iv) आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण के पास 1922 अधिनियम की धारा 66 (1) के तहत आवेदन करने के लिए निर्धारित सीमा की अवधि को बढ़ाने के लिए कानून के किसी भी प्रावधान के तहत कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। यदि आवेदन निर्धारित समय से अधिक किया जाता है, तो ट्रिब्यूनल के पास इसे खारिज करने के अलावा कोई विवेकाधिकार नहीं है जब तक कि इसके विपरीत एक वैधानिक प्रावधान नहीं किया जाता है या परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के प्रावधान उन कार्यवाहियों पर लागू नहीं होते हैं;

(v) आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण के पास 1961 अधिनियम की धारा 256 की उप-धारा (ए) के तहत आवेदन करने में अधिकतम तीस दिनों की देरी को माफ करने का अधिकार है, यदि ट्रिब्यूनल संतुष्ट है कि आवेदन समय के भीतर दायर नहीं किया गया था;

(vi) 1961 के अधिनियम की धारा 297 (2) (ए) में प्रयुक्त "किसी व्यक्ति के मूल्यांकन के लिए कार्यवाही" शब्द सबसे व्यापक संभव आयाम का है और उक्त वाक्यांश में "मूल्यांकन" शब्द का उपयोग इसके व्यापक और बहुत व्यापक अर्थ ो में किया गया है ताकि इसमें आयकर अधिनियम या वित्त अधिनियम के तहत उस स्तर तक मूल्यांकन से संबंधित सभी संभावित कार्यवाही को शामिल किया जा

सके, जिसके बाद कुछ भी नहीं बचा है। विचाराधीन वर्ष के संबंध में कर के आकलन और गणना के संबंध में किया गया; और

(vii) उक्त अधिनियम की धारा 298 के तहत जारी 1961 अधिनियम की धारा 297 की उप-धारा (2) के खंड (ए) और उक्त अधिनियम की धारा 298 के तहत जारी आयकर (कठिनाइयों का निवारण) आदेश, 1962 के खंड (ए) के संचालन का संयुक्त प्रभाव यह है कि उस आकलन वर्ष के संबंध में उच्च न्यायालय के संदर्भ के लिए आवेदन सहित सभी कार्यवाही, जिसके संबंध में आय रिटर्न 1 अप्रैल से पहले दाखिल किया गया था, 1962 को 1922 के अधिनियम के तहत निपटाया जाना चाहिए जैसे कि 1961 का अधिनियम पारित नहीं किया गया था।

(22) उपरोक्त निष्कर्षों के परिणामस्वरूप इस आवेदन को खारिज कर दिया जाता है। हालांकि, हम लागत के बारे में कोई आदेश नहीं देते हैं।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

वनित कौर सोखी

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)